ECONSPEAK: A Journal of Advances in Management IT & Social Sciences,
Vol. 14, Issue 10,Oct 2024 Impact Factor 8.059 ISSN: (2231-4571)
www.skirec.org Email Id: skirec.org@gmail.com

# भील जनजाति पर आधुनिकता का प्रभाव

**अरविन्द कुमार**
**हिन्दी विभाग**
**योगेश्वर महाविधालय,सज्जनगढ़**

राजस्थान की भील संस्कृति एवं इतिहास के बारे में वैदिक युग से 7वीं शताब्दी के समाप्तिकाल तक बहुत ही कम सामग्री उपलब्ध होती है, उससे भील जीवन एवं संस्कृति पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है, किन्तु भील जाति इतनी प्राचीन है कि 500वीं सदी ई.पू. में भी ये प्रजाति के रूप में विद्यमान थी, छठी शताब्दी ई.पू. के आस–पास कथासरित्सागर में भील शब्द का उल्लेख हुआ है। सन् 626 ई. में गुहिलोतों की वंश परम्परा में चतुर्थ ईडर के शासक नागादित्य द्वारा भीलों की सहायता से उदयपुर के समीप नागदा की स्थापना का उल्लेख मिलता है। राजस्थान के दक्षिणी–पूर्वी भाग में अरावली पर्वत श्रृंखलाओं में भी भील वेदों के समय से रहते आये है, यद्यपि उनके बारे में बहुत ही अल्प जानकारी उपलब्ध है।

आधुनिक समाज परिवर्तनशील दौर से गुजर रहा है। समाज एवं राष्ट्र के विकास के केन्द्र में मूलतः व्यक्ति है जब तक व्यक्ति का व्यक्तित्व निखरकर सामाजिक–सांकृतिक मूल्यों के अनुरूप नहीं हो जाता है तब तक विकास सर्वांगीण नहीं हो सकता है। विकास प्रक्रिया में नगरीकरण, शिक्षा का अपना स्थान है जो मानव को विकास के लक्ष्य पूरा करने में हित साधक के रूप में कार्य करती है परन्तु यह भी सर्वविदित है कि मानव मात्र के विकास के लिए सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों का भी उतना ही महत्त्व है जितना भौतिक पक्ष का। विकास की इस यात्रा में दूसरों का विकास बाधित न हो यह ध्यान में रखना होगा, संस्कृतियों का नाश करके विकास नहीं हो
सकता है।

भील जनजाति आदिवासी प्रकृति के निकट रहने से ये प्रकृति पूजक है। भाषायी दृष्टि से भाषा विज्ञानियों ने भारतीय आदिवासी भाषाओं को मुख्यतः तीन भाषा परिवारों में रखा है

द्रविड़, आस्ट्रिक एवं चीनी तिब्बती। कुछेक आदिवासी भाषाएँ भाषा परिवार से भी साम्य रखती है। भीली, संथाल एवं गोंड़ी भारतीय आदिवासियों द्वारा बोली जाने वाली प्रमुख भाषाएँ है। जिसमें संथाली एवं बोडो को संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान प्राप्त है। भीलों में लोक कथाओं, गीतों, कहावतों और मुहावरों की मौखिक परम्परा समृद्ध रही है। जिसे पुरखा साहित्य का नाम दिया गया है। हिन्दुओं के महान धार्मिक ग्रन्थ रामायण के रचयिता महर्षि वाल्मीकि भी भील जनजाति के आदिवासी थे। जो अपने आप में समृद्ध साहित्य है एवं युग–युगान्तर से भारतीय समाज को दिशा दिखाती रही है। सभ्य समाजों में हमें मनुष्य की वर्तमान स्थिति एवं विकास के भौतिक आयामों का पता चलता है वही आदिम समाज किस प्रकार सरलता से प्रकृति की गोद में नैसर्गिक रूप से जीवन यापन कर अपना समय पूरा करता है यह ज्ञात होता है। शहरी समाज, सभ्यता के मकडजाल में उलझकर अपने नैसर्गिक लक्ष्यों को भूल गया है सामाजिक व्यवहार, रीतिरिवाज एवं भौतिकता में अपने आप को इतना उलझा दिया है कि उसका अपना संतोष कही खो सा गया प्रतीत होता है।

आधुनिक विश्व में 'ग्लोबलाइजेशन' का विचार कई गंभीर खामियों के बावजूद देशों के विकास की अनिवार्य शर्त बनता जा रहा है। आधुनिक विश्व में 'ग्लोबलाइजेशन' अवधारणा का प्रचार वैश्विक कुटुम्ब के रूप में हुआ है। विश्व के राष्ट्रों की आवश्यकता या स्वार्थ ने आखिरकार औपनिवैशिककालीन शोषण काल के पश्चात् विकासशील व गरीब देशों की ओर एक बार पुनः रूख करने को बाध्य किया। जागरूक व समझदार होते विश्व को भी किस प्रकार झांसे में लिया जा सकता है 'वैश्वीकरण' का यह लुभावना 'वैश्विक गाँव' का नारा इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। वैश्वीकरण ने मानव के प्रत्येक पहलू को गहराई से प्रभावित किया है। विकसित राष्ट्रों द्वारा स्वार्थपूर्ण उद्देश्य को लक्षित करते हुए स्वयं की अतिरिक्त मात्रा की तैयार उपभोक्ता सामग्री के लिए, अछूता रहा विशाल बाजार सुनिश्चत करते हुए इस वैश्वीकरण के अद्भूत विचार ने विश्व के विभिन्न समुदायों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तन के एक नये युग की शुरूआत की। जिसके साथ ही विश्व के

सभी राष्ट्रों में परस्पर आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक व शैक्षणिक अन्तर्सम्बन्धों के नये अध्याय प्रारंभ हुये। इस तंत्र में सभी में स्वार्थपरक नजदीकता स्थापित हुई। इस माहौल में एल.पी.जी. (लिबरलाईजेशन प्राईवेटाईजेशन, ग्लोबलाइजेशन) अवधारणा विस्तारित हुई। वैश्विक विकास के संकेत व प्रतीक इस प्रकार उजागर किये गये है कि समाज दिग्भ्रमित होता दिख रा है। कुछ राष्ट्रों की मजबूरी की आवश्यकताओं को विश्व की आवश्यकता का पर्याय प्रचारित किया गया है।

भारत में जनजाति आबादी को आदिवासी कहा जाता है। इसे भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति कहा गया है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 366 (25) के तहत अनुसूचित जनजातियों को संविधान की धारा 342 के अनुसार आने वाली अनुसूचित जनजातियों के समान जनजातियाँ या ऐसी जनजातीय श्रेणी को सम्मिलित किया जाता है जो संविधान ऑर्डर 1950 की सूची के आधार पर 744 जनजातियों को इसमें सम्मिलित किया गया है। 2011 की जगणना के अनुसार भारत में 8.6 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासियों की है। यह समुदाय मुख्यतया घने वन क्षेत्रों व पहाडी क्षेत्रों में निवास करता है। भारतीय आदिवासी समाज जो अभी आधुनिक समाज को ही समझ नहीं पाया है, वह अभी तक समाज के विकास से वंचित ही है। इस पर एकाएक वैश्वीकरण का बम फूट गया है। यह समाज एक ऐसा निरीह व अविकसित वर्ग है जो राष्ट्र की मुख्य धारा के साथ जुड़ना ही नहीं चाहता है। सरकार के भरसक प्रयासों के बावजूद ये लोग अपनी पारंपरिक जीवन शैली को त्यागने को या आंशिक परिवर्तन करने को तैयार नहीं है और न ही अपने रीति–रिवाजों से समझौता करते है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया में उनकी इसी जीवन शैली में हस्तक्षेप किया जा रहा है।

भील जनजाति का जीवन आम लोगों से इस अर्थ में भिन्न है कि वे आधुनिकतावादी प्रवृत्तियों से पार्थक्य की नीति अपनाते है। अर्थात् अपनी भाषा, संस्कृति, परम्पराओं को आदिवासी समाज किसी प्रकार से छोडना नहीं चाहता है। आधुनिक समाज के लोगों से मिलने भर से ही भयभीत होने वाला यह वर्ग समूल नष्ट होने की आशंका से डर जाता है।

ऐतिहासिक रूप से अगर किसी आदिवासी समाज विशेष ने उनको अपने समाज से सम्बन्धित होने का अवसर भी दिया तो उसे अंततः परिणाम के रूप में उसका घौर शोषण ही प्राप्त हुआ है। अतः यह समाज अपनी पहचान को कायम रखना चाहता है। इसके लिये वह किसी भी ऐसे संभावित खतरे से बचाव का एक मात्र उपाय आधुनिक विश्व के विकास से स्वयं को दूर रखने में ही मानता है। अपनी नृजातीय सांस्कृतिक विशेषताओं को अक्षुण्ण बनाये रखना चाहते है। पारम्पररिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक विन्यासों को यथावत रखना चाहते है।

भील जनजाति समाज का आर्थिक ढांचा अपन मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्त्ति को सुनिश्चित करने अर्थात् भोजन, पर्यावरण, आवास तक ही सीमित रहता है। जबकि आधुनिक विश्व की आर्थिक व्यवस्था इससे भी परे जाकर भरपूर अतिरिक्त मात्रा का उत्पादन व उसका संग्रहण करने की ओर प्रवृत रहती हैं। इस व्यवस्था में जहाँ आदिवासी पर्यावरण के साथ रहकर अपना आर्थिक कार्य सम्पन्न करता है वहीं आधुनिक समाज प्राकृतिक संसाधनों के दोहन व शोषण के स्तर पर उतर कर अपने आर्थिक विकास को सुनिश्चित करता है। आदिवासी समाज का आर्थिक तंत्र संतोषी भाव पर आधारित होता है। वहीं आधुनिक समाज और अधिक की ओर सदैव प्रयासरत रहता है। वह स्वयं के संसाधनों को दोहन करने के पश्चात् अन्य के संसाधनों पर कुदृष्टि डालने लगता है। प्राकृतिक पर्यावरण से लगाव को प्रदर्शित करने वाला यह वर्ग इन व्यवस्थाओं में लेशमात्र परिमार्जन का परिवर्तन भी नहीं चाहता है।

भारत में औपनिवेशिक शासन की स्थापना एवं सुदृढ़ीकरण के बाद से ही आदिवासियों को राजनीतिक, आर्थिक व प्रशासनिक दृष्टि से शेष भारतीय समाज के साथ जोड़ने की कोशिश की गई। इस प्रक्रिया में न केवल उनका स्वतंत्र व शान्तिपूर्ण जीवन भंग हुआ वरन् वे भी कर्ज, बेरोजगारी, गरीबी–शोषण जैसी आधुनिकतावादी प्रवृत्तियों से ग्रस्त हुए। यहीं से उनकी मानवाधिकारों के हनन की प्रक्रिया भी शुरू हुई। यही दशा राजस्थान के आदिवासी वर्ग के साथ भी हुई है। अग्रेजी शासन में वन प्रबन्धन का उद्देश्य व्यावसायिक था। इसलिये

अंग्रजों का दृष्टिकोण/ ध्येय वन क्षेत्रों पर एकाधिकार एवं स्वार्थपरक दोहन था। रेल्वे, औद्योगिकीकरण, बांध निर्माण के लिए जंगल की भूमि ली गई और आदिवासियों को बिना मुआवजे के बेदलख कर दिया गया क्योंकि उनके पास अभिलेख रूप में कोई मालिकाना हक नहीं था। विकास के नाम पर निर्वाह के लिए आवश्यक अधिकतम प्राकृतिक स्त्रोतों से वंचित वनवासी का जीवन और अधिक जटिल हो गया है। निरंतर खराब होती आर्थिक स्थिति के कारण आदिवासियों का जीवन स्तर और अधिक नीचे गिर गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात् सम्पूर्ण देश के भू–भाग पर स्वामित्व भारत सरकार का माना गया है। आदिवासियों की इस भूमि पर भी स्वामित्व सरकार का ही हो गया है। तात्कालिक व्यवस्था में उसकी परख करने के बजाय गुलामी के दस्तावेजों को उसी अनुरूप स्वीकार कर लिया। स्वतंत्रता पश्चात् आदिवासी वर्ग के उत्थान का दायित्व केन्द्रीय सरकार पर आ गया है। लेकिन विरासत में हजारों वर्षो से शोषित इन समुदायों के जीवन स्तर को कुछ बेहत्तर कर पाना भी गंभीर चुनौति बन गया। नीति निर्माताओं ने इनके विकास की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। अभी आजाद हुये देश के समक्ष ढेरों चुनौतियाँ विद्यमान है। इन चुनौतियों से सामना करने बहुसंख्यक समाजों को संतुष्ट करने में ही देश के संसाधनों का उपयोग प्रारंभ हुआ।

भील जनजाति अंचलों में प्राकृतिक संसाधनों की जो लूटने की लालचा वैश्वीकरण के इस दौर में मची हुई है उससे आदिवासी समाज के जीवन को नारकीय बना दिया है। आधारभूत सुविधाओं, मानवाधिकारों, लोकतंत्र में भागीदारी आदि की बाते तो बहुत दूर वरन् इस समुदाय का अस्तित्व ही गहरे संकट में डाल दिया है। वैश्वीकरण के इस युग में आदिवासियों का वनों से प्रतिकात्मक सम्बन्धों पर भी प्रभाव पड़ा है। पारम्परिक दृष्टि से वनों पर आदिवासियों का एक प्रकार से नियंत्रण रहा था। सरकार द्वारा इन वनों व प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्धन अपने हाथो में लेने से तथा प्रशासनिक ज्यादती (कानूनी व गैर कानूनी) के कारण इस वर्ग में तनाव बढ़ा है। आज आदिवासियों की मूलभूत समस्याएँ रोटी, कपड़ा, मकान, बेरोजगारी एवं शिक्षा की है तथा संविधान में इन्हें जो अधिकार दिये गये है वे भी

मूलरूप से लागू नहीं हुये है। आज देश में पाँचवी व छठीं अनुसूची की मांग की जा रही है वो आदिवासियों के लिए महत्त्वपूर्ण है। वर्तमान समय में आदिवासियों के लिए संवैधानिक अधिकार है वो धरातल पर लागू किये जाने चाहिए ताकि संस्कृति, सभ्यता, परम्परा, जल–जंगल–जमीन का संरक्षण किया जा सकें।

## युवा वर्ग पर आधुनिकता का प्रभाव

आज जनजातीय युवा ही नहीं पुरे भारत के युवा वर्ग **आधुनिकता** से प्रभावित हो रहे है। वैश्वीकरण वर्तमान के समय के व्यापारिक माहोल की ऐसी अवधारणा है जो पुरे विश्व को एक मंडल, एक केन्द्र बनाने की बात करती है। आज वैश्वीकरण प्रत्येक क्षेत्र एवं वर्ग का मुख्य विषय बन गया है क्योंकि इसने समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है।

प्रशासनिक सम्पर्क, शहरी सम्पर्क, शिक्षा, सरकार द्वारा प्रवर्तित कल्याणकारी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक सुधार के लिए भारत में और कुछ सीमा तक राजस्थान में होने वाले आन्दालनों ने ग्रामीण जनजातीय जनजीवन को प्रभावित किया है। इस समय गांव के लोगों के शहरों से सम्पर्क भी निरन्तर बढते चले गये, शहर में पढ़ाई के लिए अथवा रोजगा के लिए छोटी अथवा लम्बी अवधि के लिये रहना, मोटर साईकिलें और बसों के आ जाने से शहरी क्षेत्रों से नियमित और अधिकाधिक सम्पर्क सम्भव हो गये। पुस्तकें, पत्र–पत्रिकाएं, समाचार–पत्र, टी.वी., इन्टरनेट आदि गांव में आने से लोगों को दूनिया के बारे में अजीब–अजीब बाते सुनने को मिलने लगी।

दक्षिणी राजस्थान का जनजातीय युवा वर्ग आज वैश्वीकरण के दौर से गुजर रहा है और प्रभावित हो रहा है। चाहे वो संचार साधन हो या यातायात साधन या इलेक्ट्रोनिक वस्तुएं आदि से जनजातीय युवा आज वैश्वीकरण की और अग्रसर हो रहा है। मोबाईल एवं टी.वी. तथा इंटरनेट ने युवा लोगों में बाहरी दुनिया के प्रति आकर्षण बढ़ाया हैं। युवा वर्ग जिसने शिक्षा पाई है या जिनका शहरों से सम्पर्क या शहर जाने की ईच्छा की अभिव्यक्ति अधिकाधिक होने लगी है। अब युवा वर्ग पढ़ाई के साथ–साथ धरेलू खर्च हेतु अनेक व्यवसाय

अपनाने लगे है। नये सामाजिक–आर्थिक कारकों के प्रभव स्वरूप पारिवारिक बंधन कमजोर पड़ रहे है।

गांवों में स्वशासन को पुर्नजीवित करने के उद्देश्य से राज्य सरकार ने कानून द्वारा मान्यता प्राप्त शक्ति संपन्न ग्राम पंचायते स्थापित कर रखी है जिसके सदस्य जनता और सरकार द्वारा नियुक्त होते है। क्षेत्रीय तथा सामाजिक–आर्थिक एवं धार्मिक इकाई के रूप में गांव एक स्वतंत्र और स्पष्टतः भिन्न इकाई है। अपने गांव की भूमि के प्रति उनमें सामान्यतया लगाव पाया जाता है। गांव के सदस्य पारस्परिक आभार– दायित्वों के बंधन से जुड़े होते है। समुदाय की स्थापित रीतियों को तोड़ने पर गांव के बड़े–बूढे या गांव की पंचायत को सामाजिक बहिष्कार का अंतिम अधिकार होता है जिनके माध्यम से वह अपनी अनुशास्तियों का पालन करवाने में समर्थ होती है।

**सारांश–**

**आधुनिकता** का एक महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है कि आदिवासी तथा आदिवासी बाजार का वैश्विक अर्थव्यवस्था तथा बाजार के साथ तेजी से एकीकरण हो रहा है। आदिवासी अर्थव्यवस्था में वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप श्रम एवं वस्तुओं का विश्व स्तर पर एकीकरण हो रहा है इससे गलाकाट प्रतिद्वंदता बढ़ रही है, राष्ट्रीय परिस्थितियों में जनजातियों की समस्याओं को देखने के बजाए वैश्विक परिस्थितियों में देखा जा रहा है, जिससे जनजातियों की आवाज कमजोर हुई।

पिछले कुछ दशकों से विकास के नाम पर जनजातीय गांवों का स्वरूप बदल रहा है। इस शहरीकरण एवं वैश्वीकरण की प्रक्रिया में नैतिक मूल्यों का ह्रास हो गया है। लोग रोजी–रोटी की तलाश में गायों से शहरों की ओर पलायन कर रहे है और वहां से नशे की आदत और ऐसी कई बुराईयां साथ लेकर आ रहे हैं, जिनकी उनके बुजुर्गों ने कभी कल्पना नहीं की थी। भाईचारे की भावना बिल्कुल विलुप्त हो गई है। रोजगार तथा ग्रामीण उद्योगों के अभाव के कारण युवकों का शहरों की और पलायन करना तथा आधुनिकता के मायाजाल में फंस कर बुराईयों को गले लगाना कोई हैरानी की बात नहीं हैं। जनजातियों के हाथों में जब

तक आर्थिक और राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं होगी, विकास की कल्पना को साकार करना मुश्किल होगा जनजाति समूह का विकास हुआ है पर निरक्षर लोगों को उसका लाभ बहुत कम मिला है। लगभग एक तिहाई जनसंख्या का जीवन स्तर सुधरा है और सामान्यजन भविष्य की और आशा से देख रहे है। जो वायदे उनसे किये गये थे वे आधुनिक युग में भी पूरे नहीं हुए गरीबी का उन्मूलन नहीं हुआ, बेरोजगारी का परिणाम बढ़ा है घटा नहीं और सामाजिक सेवाओं की गुणवत्ता संदिग्ध ही रही है। स्वाभाविक ही है कि जन असतोष बढ़ा है जिस करिश्मे की प्रतिक्षा थी वह वैश्वीकरण के दौर में साकार होता दिखाई नहीं पड़ता।

**संदर्भ ग्रन्थ सूची** :–

1. राठौड़, अजयसिंह (1994),भील जनजाति शिक्षा और आधुनिकीकरण, पचंशील प्रकाशन जयपुर
2. दोसी, शम्भुलाल /व्यास नरेन्द्र (1992) ''राजस्थान की अनुसूचित जनजातियां'' हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर
3. मीणा, जगदीश चन्द्र (2003) '' भील जनजाति का सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन'' हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर
4. जैन, संतोष कुमारी (2001) ''आदिवासी भील–मीणा'' यूनिक ट्रेडर्स चौडा रास्ता, जयपुर
5. नायक, टी.बी. (1956) ''द भील्स–ए स्टडी'' भारतीय आदिम जाति संघ, दिल्ली
6. उत्प्रेती, हरिशचंद्र (1970) ''भारतीय जनजातियां'' सामाजिक विज्ञान हिन्दी रचना केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
7. जैन, श्रीचन्द (1973) ''वनवासी भील और उनकी संस्कृति'' रोशनलाल जैन एण्ड सन्स, जयपुर
8. जैन, संतोष कुमारी (1981) ''आदिवासी भील–मीणा'' साधना बुक्स, आमेर रोड, जयपुर
9. पाठक, शोभनाथ, (1983) '' भीलों के बीच बीस वर्ष'' प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली
10. **मीणा, हरिराम (2014) ''आदिवासी दुनिया'', नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।**
11. **श्रीनिवास, एम.एन. ''आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन'' राजकमल प्रकाशन, नई**

दिल्ली।

12. नायडू, पी.आर. (1997) '' भारत के आदिवासी विकास की समस्याऐं'' राधापब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
13. मेहता, प्रकाशचन्द्र (1993) '' भारत के आदिवासी'' शिवा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, उदयपुर।
14. भट्ट,नीरजा (2007) ''18वीं 19वीं शताब्दी में राजस्थान का भील समाज'' हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर